सुख की खोज में दिन-रात भटकते हुए जीवों को परम सुख प्राप्त करने का मार्ग बताने वाली अद्‌भुत पुस्तक

Secret of Happiness

सुख का रहस्य

:: लेखक ::

हीर

मुख्य प्राप्तिस्थान

नवभारत साहित्य मंदिर

जैन देरासर के पास,
गांधी रोड, अहमदाबाद-१
फोन : (०७९) २२१३९२५३
२२१२२९२१

२०२, पेलिकन हाउस,
आश्रम रोड, अहमदाबाद-९
फोन : (०७९) २६५८३७८७
२६५८०३६५

E-mail : info@navbharatonline.com
Web : www.navbharatonline.com
fb.com/NavbharatSahityaMandir

TOYCRA
play to grow

दूसरी मंजिल,
इन्द्रप्रस्थ कॉर्पोरेट हाउस,
शेल पेट्रोल पंप के सामने,
विनस एटलान्टिस के सामने,
१०० फूट प्रह्लादनगर गार्डन रोड,
अहमदाबाद
फोन : (०७९) ६६१७०२६५
मो. ९८७९१ १०६५०

SECRET OF HAPPINESS

by Hir

Navsarjan Publication, Ahmedabad
2017

© प्रकाशक

प्रथम आवृत्ति : वि.सं. २०७३
इ.स. २०१७

नकल : ५०००

₹ ५०.००

प्रकाशक

जयेन्द्र पी. शाह
नवसर्जन पब्लिकेशन
२०२, पेलिकन हाउस, गुजरात चेम्बर्स ऑफ कोमर्स के कंपाउन्ड में,
आश्रम रोड, अहमदाबाद : ३८० ००९
फोन : (०७९) २६५८०३६५

टाइप सेटिंग
क्रिएटिव प्रकाशन
राजकोट

मुद्रक
यश प्रिन्टर्स
अहमदाबाद

पहले इतना पढ़े, फिर आगे बढ़े...

अनादिकाल से इस विश्व के समग्र जीवों का एक मात्र कोई लक्ष्य हो तो वह है **'सुख की प्राप्ति'।** सुखी बनने के लिये कोई पैसे के पीछे दौड़ रहा है, तो कोई नाम अमर करने का प्रयत्न कर रहा है, कोई शरीर को मजबूत बना रहा है, तो कोई अपने संबंध व व्यवहारों को बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा है । प्रयत्न भले ही लाखों प्रकार के हो, पर लक्ष्य तो सभी का एक ही है और वह है किसी भी प्रकार से 'मैं सुखी बनूं'। सुखी बनने का लाख प्रयत्न करने के बाद भी, जब उसका इच्छित सुख उसे नहीं मिलता, तब वह चित्र-विचित्र हरकतें करने लगता है, टेंशन-डिप्रेशन में आ जाता है, अपना गुस्सा दूसरों पर उतारने लगता है, दूसरों की हत्या अथवा खुद आत्महत्या तक भी पहुँच जाता है ।

पर जैसे 5 रु. खो जाने पर व्यथित होने वाले भिखारी को जब यह पता चलता है कि उसे कुछ ही समय में 5 करोड रु. भेट में मिलने वाले है तब उसे 5 रु. गुम हो जाने का गम नहीं रहता । बस वैसे ही जब व्यक्ति को यह पता चलता है कि अनंत सुख का खजाना तो मेरे अंदर ही रहा हुआ है और मैं अगर चाहूँ तो कुछ ही समय में आसानी से उसे प्राप्त कर सकता हूँ तब वर्तमान जीवन के प्रति उसकी सारी शिकायतें छू-मंतर हो जाती है । परिस्थितियाँ

भले न बदले, पर मनःस्थिति तो पूरी तरह बदल जाती है और फलस्वरूप वह हर समय प्रसन्नता के सागर में स्नान कर सकता है । तो ऐसी कौन-सी विचारधारा है, जिसे जानने एवं जीवन में आत्मसात् करने के साथ ही हमारे टेंशन-डिप्रेशन सदा के लिये अलविदा हो सकते हैं ? यह अगर जानना चाहते हों, तो इस पुस्तक को संपूर्णतया बार-बार अवश्य पढ़ें...

- प्रकाशक गण

प्रस्तावना

मैं कौन हूँ ? मैं कहाँ से आया हूँ ? मेरा जन्म यहाँ पर क्यों हुआ है ? मेरे जीवन में इतने सारे दु:ख क्यों आ रहे हैं ? मरने के बाद मेरा क्या होगा ? ऐसे अनेकानेक सवाल प्रत्येक व्यक्ति के मन में अनेक बार उत्पन्न होते ही रहते हैं । क्या होंगे इनके जवाब? यह प्रत्येक व्यक्ति जानना चाहता है पर जब इन प्रश्नों के सही समाधान नहीं मिलते तब वह भ्रमित हो जाता है और कार्य-अकार्य का विवेक चूक जाता है ।

तद्फलस्वरूप वह न करने जैसे कार्य करने लगता है और करने जैसे कार्यों से दूर भागने लगता है, जिसके परिणाम स्वरूप वह घोर दु:खों को आमंत्रण देता है और जब-जब जीवन में दु:ख आते हैं तब-तब उन दु:खों को कैसे दूर किया जाए उसका ही प्रयत्न करने लगता है, पर मेरे जीवन में जो दु:ख आ रहे हैं उसके कारण क्या हैं ? ये उसे कभी पता ही नहीं चलता । जिसके फलस्वरूप वह अनंत दु:खमय इस संसार में, दु:खों से ग्रस्त बनकर भटकता ही रहता है । उसे कभी शांति की प्राप्ति नहीं होती । क्या है दु:खों का मूल कारण ? क्या है उपरोक्त सवालों के जवाब ? यदि आप यह जानना चाहते हैं तो आईये, चलते हैं ज्ञान के महासागर की ओर जिसमें इस विश्व के प्रायः सभी सवालों के जवाब मौजूद हैं...

आज से असंख्य वर्ष पूर्व एक ऐसे व्यक्ति ने जन्म लिया, जिसे इस संसार में घोर दु:खों से ग्रस्त जीवों को

देखकर अत्यंत पीडा महसूस हुई । उसका अंतर रोने लगा। उसके मन में ऐसी इच्छा उत्पन्न हुई कि मेरी चले तो मैं इस विश्व के समस्त जीवों को समग्र दु:खों से मुक्त कर दूँ । उसने जानना चाहा कि इस विश्व में जितने भी दु:ख हैं, उनका मूल कारण क्या है ? यह जानने के लिये उसने अपने धन-वैभव का त्याग किया । संन्यास स्वीकार किया । अनेकानेक जन्मों की साधना के बाद अपने अंदर में रहे हुए अज्ञान को दूर करने हेतु अपने अंतिम जन्म में उसने साढ़े बारह साल तक कठोर तपश्चर्या एवं साधना की ।

इस उग्र साधना के फलस्वरूप उसे त्रिकालज्ञान प्रकट हुआ । जिसमें उसे इस संपूर्ण विश्व का अनंत भूतकाल-वर्तमानकाल तथा अनंत भविष्यकाल एक साथ दिखाई देने लगा । अपनी सर्वज्ञता के द्वारा उसने इस विश्व में सुख और दु:ख के कारणों को जाना और जानकर जैसा देखा था वैसा हमें भी बताया कि क्या करने से हमारे जीवन में सुख आते हैं ? और क्या करने से हमारे जीवन में दु:ख आते हैं ? हमें सदा के लिये सुखी बनना हों तो क्या करना चाहिये ? और कभी दु:खी ना बनना हो तो क्या करना चाहिये ? यह व्यक्ति अर्थात् और कोई नहीं, परंतु जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर 'भगवान महावीर' । तो आईये, हम भी सर्वज्ञ भगवान महावीर स्वामी ने देखे हुए वर्तमान विश्व के वास्तविक रहस्यों का ज्ञान प्राप्त कर सदा के लिये सुखी बनने के secrets को समझे।

- हीर

Secret of Happiness
सुख का रहस्य

इस संसार में जन्म लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति की यह इच्छा होती है कि मुझे इस संसार के सभी सुख मिले पर वास्तविक सुख किसे कहते है, उसका ज्ञान न होने के कारण वह सुख के बदले दु:ख ही ज्यादा प्राप्त करता है । जैसे अग्नि को चमकदार वस्तु समझकर पकड़ने वाला बालक जले बिना नहीं रहता, वैसे ही जिसमें सुख का अंश मात्र भी नहीं, ऐसी वस्तुओं में सुख मानकर उसका संग्रह करने वाले व्यक्ति के जीवन में भी सुख के बदले दु:ख के पहाड़ ही टूट पड़ते हैं । अगर एक छोटी सी वस्तु भी घर में बसानी हो, तो लाने से पहले हम उसकी संपूर्ण जाँच-पड़ताल करते हैं, तो जिन सुखों को प्राप्त करने के लिए हम अपना पूरा जीवन और धन लगा रहे हैं, उनके लिये कभी विचार भी किया है कि मैं जिन्हें सुख मानकर, आँख मूँदकर जिनके पीछे दौड़ रहा हूँ... वे गाड़ी-बंगला-पैसा-भोजन-मोबाईल आदि साधन क्या मुझे वास्तव में सुख दे सकते हैं ?

आज तक बहुत सारी वस्तुओं की जाँच-पड़ताल की है । चलो, आज हम हमारे अत्यंत प्रिय सुख को भी अपने संशोधन का विषय बनाते हैं । जरा सोचो, कि **हमें कैसा सुख पसंद आएगा ?** इसका जवाब कुछ ऐसा होगा कि सुख तो ऐसा होना चाहिए कि...

(1) जिससे हम कभी bore न हो जाए,

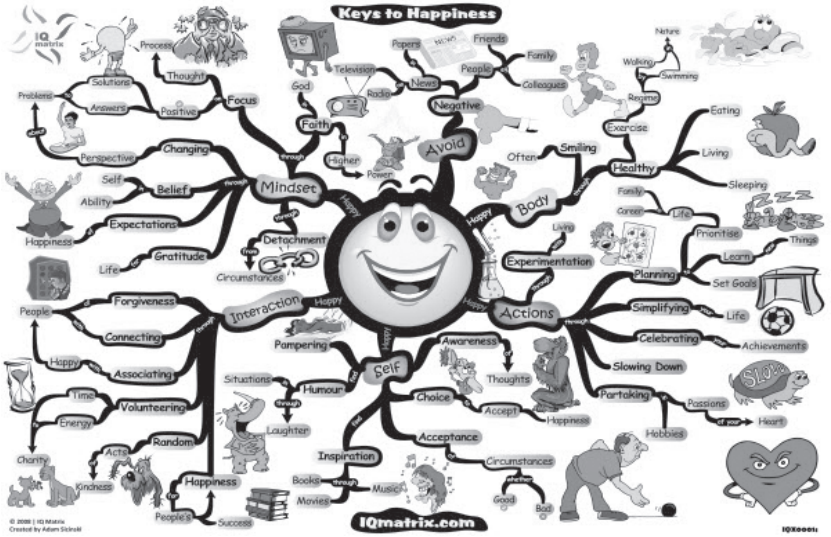

(2) जिसे पाने के लिए हमें पहले या बाद में दु:ख का अनुभव न करना पडे, किसी भी प्रकार का कष्ट सहन न करना पडे,

(3) जिसका हम निरंतर प्रतिक्षण अनुभव कर सकें,

(4) जो सभी प्रकार के मानसिक एवं शारीरिक दु:खों से मुक्त हो,

(5) जिसको पाने हेतु कभी किसी की गुलामी ना करनी पड़े,

(6) जो सभी प्रकार के भय से मुक्त हो,

(7) जिसको पाने के बाद और कुछ पाने की इच्छा ही न जगे,

(8) और, जो हमें गलत रास्ते पर न ले जाए ।

आप कहेंगे कि **''इस प्रकार के सुख की तो हमने मात्र कल्पना ही की है, पर हकीकत में ऐसा विशिष्ट सुख किसी को मिल सकता है क्या ? और अगर मिल सकता है, तो उसे कैसे**

पाया जा सकता है ?'' इसका जवाब है – हाँ, ऐसा विशिष्ट सुख हकीकत में मिल सकता है और ऐसे सुख को अगर प्राप्त करना हो तो हम जिसे सुख मानकर जिसके पीछे दौड़ रहे हैं वैसे इस संसार के भ्रामक सुखों को देने वाले समस्त साधनों को तिलांजलि देनी पड़ेगी । आप कहेंगे कि **''साधनों से प्राप्त इस संसार के सुख नकली है यह कैसे सिद्ध हो सकता है ?''** तो ये रहा उसका जवाब...

(1) जैसे जिस फिल्म को देखते समय हमें उबासी या नींद आती हो ऐसी फिल्म हम बार–बार देखने नहीं जाते, क्योंकि वो हमें bore कर रही है । वैसे ही सच्चा सुख तो उसे ही कह सकते है, कि जिस पर से कभी हमारा मन ना उठे, जिससे हम कभी ऊब न जाए । जबकि यहाँ पर हम सुख प्राप्त करने हेतु जिन–जिन वस्तुओं का उपभोग कर रहे हैं, उन समस्त वस्तुओं के द्वारा प्राप्त सुख पर से थोडे ही समय में हमारा मन उठ जाता है । जैसे कि कितनी भी मनपसंद मिठाई क्यों न हो, पर वह अगर हर रोज हमारी थाली में आने लगे, तो वह हमारे लिये सुख के बदले दुःख का ही कारण बन जाती है । दूसरे दिन की कहाँ बात करें, पर कहीं खाना खाने गए हो और वहाँ मात्र मिठाई ही हो, दूसरा कुछ न हो तो खाने में आनंद ही नहीं आता । तो इस संसार में ऐसी कौन सी वस्तु है कि जिसका नित्य उपभोग करने के बाद भी उससे प्राप्त सुख पर से हमारा मन न उठे ? कहना ही पड़ेगा कि एक भी नहीं । तो जिसकी निरंतरता हमारे लिये अरुचिकारक बनती हो, ऐसे साधनों के द्वारा प्राप्त सुख को हम सच्चा सुख कैसे कह सकते हैं ?

(2) जो काम करने के पहले या बाद में हमारी पिटाई होती हो, ऐसा काम हम नहीं करते । वैसे सच्चा सुख तो उसे ही कह सकते है, जो दुःख

के अंशमात्र से भी मुक्त हो । जिसे प्राप्त करने के लिये आगे-पीछे दुःख रूपी कीमत न चुकानी पडे । जबकि हम यहाँ पर सुख मानकर जिसका आस्वाद ले रहे हैं, वो दुःख के बिना प्राप्त किया जा सके ऐसा है ही नहीं । जैसे कि पहले शरीर में भूख का दुःख खड़ा होता है, बाद में ही भोजन सुख रूप लगता है । अगर भूख के बिना ही भोजन करने लगें, तो उसमें आनंद ही नहीं आएगा और भोजन भी तब तक ही सुखदायक प्रतीत होता है जब तक भूख रूपी दुःख हाजिर हो । जैसे ही भूख रूपी दुःख मिट जाए, तो तुरंत ही वह भोजन सुख के बदले दुःख का अनुभव कराने वाला बन जाता है । तो जिस सुख की आधारशिला ही दुःख है ऐसे दुःख प्रतिकार रूप सुख को सच्चा सुख कहना चाहिये क्या ?

इसके सामने आप कहेंगे कि **"भोजन आदि का सुख भले ही भूख-प्यास आदि दुःख के बदले मिलता हो, पर मनपसंद संगीत, मनपसंद सुगंध, मनपसंद स्पर्श, सुंदर दृश्य, घूमना-फिरना, मजाक-मस्ती, मनोरंजन, फैशन आदि के सुख के लिये कहाँ दुःख का अनुभव करना पड़ता है ?"** इसका जवाब यह है कि संगीत श्रवण आदि के सुखों का अनुभव भले शारीरिक दुःख के बिना हो सकता है, पर संगीत आदि के सुख पसंद उसे ही आते हैं, जो मानसिक रूप से थका हुआ हो, बाकी जो खुद के मनपसंद विषय में लीन हो, उसे ये सब याद भी कहाँ आता है ? जैसे कि सीजन के समय में लाखों की कमाई करने वाले व्यापारी को काश्मीर घूमने जाने का विचार भी कहाँ आता है ? इस प्रकार अगर देखा जाए, तो जिस देश में मनोरंजन के साधन जितने अधिक हो वहाँ की प्रजा मानसिक रूप से उतनी ही अस्वस्थ है, यह निर्विवाद रूप से समझ लेना चाहिए ।

कोई अगर ऐसा कहे कि, **"भले दुःख के बदले, पर सुख का अनुभव हो तो रहा है, तो उसमें गलत क्या है ?"** तो इसका जवाब यह है कि प्रत्येक व्यक्ति निरंतर ज्यादा से ज्यादा सुखी बनना चाहता है, पर यहाँ बताए नियमानुसार तो ज्यादा सुख का अनुभव वो ही कर सकेगा, जिसने पहले ज्यादा दुःख सहन किया हो । अर्थात् जितना ज्यादा सुखी बनना हो, उतना ज्यादा दुःख सहन करना पड़ेगा ।

सिरदर्द के समय दवा लेने पर दर्द जब कम होता है, तब हम 'दुःख कम हुआ' ऐसा कहते हैं, 'सुख बढ़ गया' ऐसा नहीं कहते, वैसे इस संसार के तमाम साधन हमारे शारीरिक और मानसिक दुःखों को थोड़े समय के लिए कम कर सकते हैं, सदा के लिये तो बिलकुल नहीं । तो जिसका अनुभव करने हेतु दुःख रूपी कीमत चुकानी पड़े और जो मात्र और मात्र हमारे दुःखों को ही कम कर सकते हैं, सुख तो बढ़ा ही नहीं सकते तथा जिसका अतिरेक वापस दुःख का कारण बनता हो ऐसे साधनों के द्वारा प्राप्त सुख को सच्चा सुख कैसे कहा जा सकता है ?

जैसे खुजली के रोगी को बार-बार खुजलाने की इच्छा होती है और खुजलाते समय उसे क्षणिक सुख का आभास भी होता है, पर ऐसी खुजलाने की इच्छा को और खुजलाने की क्रिया को कोई सुख नहीं कहता, क्योंकि उसका परिणाम अच्छा नहीं आता । वास्तव में सुख की अनुभूति तो वह ही कर रहा है, जिसे ऐसा कोई रोग ही नहीं । वैसे खुजलाने की इच्छा के समान इस संसार के सुखों को प्राप्त करने की इच्छा प्रकट हो, तो समझना कि यह दुःख की उत्पत्ति हुई और खुजलाने के समान भाग्ययोग से अगर यह इच्छा पूर्ण हो जाए, यानी कि इच्छित वस्तु का उपभोग करने मिल जाए, तो समझना कि दुःख का अभाव हुआ । तो

जिस प्रक्रिया में मात्र दु:ख की उत्पत्ति और दु:ख का अभाव ही नज़र आ रहा हो, ऐसी प्रक्रिया को सुख पाने की प्रक्रिया कैसे कह सकते हैं ? क्योंकि सुखी तो वही गिना जाएगा, जिसे ऐसी कोई इच्छा उत्पन्न ही न होती हो और जिसे खुद के दु:खों को दूर करने हेतु इस संसार की किसी वस्तु की जरूरत ही ना पड़ती हो ।

(3) जैसे हम खुद के रहने के लिये समुद्र किनारे रेती का घर नहीं बनाते, क्योंकि वह ज्यादा नहीं टिकता, वैसे ही सच्चा सुख तो उसे ही कह सकते हैं कि जो क्षणिक न हो, और जिसका अनुभव चौबीसों घंटे, प्रतिक्षण होता ही रहे । जबकि यहाँ पर हम पाँच इंद्रियों के द्वारा जिस प्रकार के सुख का अनुभव कर रहे है, वह तो क्षणिक है क्योंकि इंद्रिय और शरीर की एक मर्यादा है । उस मर्यादा का अगर उल्लंघन किया जाए, तो वे तुरंत ही बगावत कर देते हैं, जैसे कि मर्यादा से ज्यादा अगर खाया जाए, तो तुरंत ही उलटी होनी शुरू हो जाती है । इस प्रकार अगर देखा जाए तो मानव जीवन के पूरे 100 साल में से जितने भी क्षण सुख का अनुभव किया हो, ऐसे क्षणों का हिसाब किया जाए तो दो-पाँच साल के जितना भी मुश्किल से होगा । अर्थात् पाँच साल के काल्पनिक सुख के लिये 95 साल तक कष्ट भरा जीवन जीना पड़े, ऐसे अल्पकालिक सुखों को सच्चा सुख कैसे कहा जाए ?

(4) जिस काम को करने में दुनिया भर की चिन्ता सताती हो, ऐसा काम हम हो सके तब तक नहीं करते, वैसे ही सच्चा सुख तो उसे ही कहना चाहिए जिसका चिंतामुक्त बनकर अनुभव किया जा सके । जिसका अनुभव करते समय प्रसन्नता रूपी सागर की लहरें आकाश जितनी उछलती हों । जबकि इस संसार में शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति देखने को

मिलेगा, जिसके जीवन में कोई समस्या न हो । कोई तन से, कोई मन से, कोई धन से, कोई खुद के जीवन से, तो कोई परिवार से परेशान ना हो, तो आश्चर्य समझना ।

वास्तव में सुखी बनने के लिये जितने साधन या संबंध बढ़ाये जाए, उतनी ही चिंता की संभावना बढ़ती जाती है, क्योंकि साधन या संबंध बढ़ाने हमारे हाथ में हैं, पर उनका संयोग होने के बाद उनकी तरफ से निरंतर अच्छे समाचार ही मिलते रहें, वे हमारे साथ वफादार ही रहें, वो कहाँ हमारे हाथ में है ? जैसे कि, जिसकी दस-दस दुकानें जोरदार चल रही हों, और उसमें से एक दुकान आग से जलकर खाक होने के समाचार मिले, तो बाकी नौ दुकानें सही-सलामत है उसका आनंद नहीं रहेगा, पर जो जल गई उसका दु:ख ही मन को घेर लेगा । तो अगर एकाध चिंता भी हमारे शेष आनंद की होली जलाने में समर्थ है, तो जो लोग सुखी बनने के लिए निरंतर नए-नए संयोग तथा संबंध बढ़ाने में व्यस्त हैं और उसके कारण अनेकानेक चिंताओं से ग्रस्त हैं, ऐसे लोगों को सुखी कैसे कहा जाए ?

और वो जिनके पीछे दौड़ रहे है, ऐसे अशांतिकारक साधनों को तथा संबंधों को सुख का कारण कैसे कहा जाए ?

दुनिया भले व्यक्ति या वस्तु के वियोग को दुःख का कारण माने पर वास्तव में संयोग ही दुःख का मूल कारण है, क्योंकि अन्य के साथ संयोग ही न किया होता तो वियोग भी कहाँ से होता ? तथा वियोग तो होने ही वाला है क्योंकि कोई संयोग शाश्वत नहीं है । तो ऐसे अशाश्वत संयोग के परिणाम स्वरूप होने वाले वियोग में दुःखी बनना, यह तो खुद के हाथ में पत्थर लेकर खुद का सिर फोड़ने के समान है ।

(5) अगर हम स्वतंत्र रहने में समर्थ हों तो किसी की गुलामी नहीं करते, वैसे ही सच्चा सुख भी उसे ही कहना चाहिये, जिसे प्राप्त करने के लिये कभी किसी की गुलामी न करनी पड़े । जो हमें प्रतिक्षण हमारे अंदर से ही मिलता हो । जबकि यहाँ पर साधनों के द्वारा जिस प्रकार के भी सुख हमें मिलते हैं, वे सब के सब पराधीन सुख हैं । जैसे कि जिसका नसीब अच्छा हो, उसे ही ये मोबाइल-लेपटोप आदि साधन मिलते हैं । मिलने के बाद भी शरीर स्वस्थ और मन प्रसन्न हो, तो ही उनका उपभोग करना अच्छा लगता है। तो जिसका अनुभव करने के लिये अच्छा नसीब, स्वस्थ शरीर, प्रसन्न मन और पदार्थ की आवश्यकता अनिवार्य हो, ऐसे पराधीन सुख को हम सच्चा सुख कैसे कह सकते हैं ?

(6) जैसे हम भूतबंगले में रहने कभी नहीं जाते क्योंकि वहाँ पर सदा मौत का भय मँडराता रहता है, वैसे ही सच्चा सुख तो उसे ही कहना चाहिए कि जिसका निर्भयतापूर्वक उपभोग किया जा सके । जबकि इस संसार में जो भी सुख के कारण दिख रहे हैं, वे निरंतर विविध प्रकार के भय से व्याप्त हैं । जैसे कि, सुखी बनने के इच्छुक व्यक्तियों में किसी का

एक्सिडेंट हो जाता है, कोई भयंकर रोग की चपेट में आ जाता है, किसी का धंधा चौपट हो जाता है, किसी को नौकरी ही नहीं मिलती, कोई दंगे में घायल हो जाता है, कोई पशुओं के आक्रमण का भोग बनता है, कोई भूत-प्रेत ग्रस्त बनता है, किसी की इज्जत मिट्टी में मिल जाती है, किसी का सब कुछ चोरी में चला जाता है, किसी को यमराज आकर ले जाता है । ऐसे सैकड़ों भय के बीच मौज-शौक के जो थोड़े-बहुत साधन मिल भी जाए तो उन्हें सुख के साधन कैसे कह सकते हैं ?

(7) जिस प्रकार भोजन से तृप्त हुए व्यक्ति को कुछ समय तक वापस भोजन करने की इच्छा नहीं होती क्योंकि उसे भोजन के प्रभाव से क्षणिक तृप्ति मिलती है, वैसे ही सच्चा सुख भी उसे ही कहना चाहिए जो हमें निरंतर तृप्ति दे सके, जिसे पाने के बाद और कुछ पाने की इच्छा ही न जगे । जबकि इस संसार में लखपति को करोड़पति और करोड़पति को अरबोंपति बनने की इच्छा होती ही रहती है और जो व्यक्ति निरंतर नई-नई इच्छाओं से ग्रस्त है तथा इच्छाएँ पूर्ण न होने से त्रस्त है, उसे सुखी कहना चाहिये या दुःखी ? जैसे रेगिस्तान में दोपहर को दिखने वाले आभासिक जल के पीछे भागने वाले को अंत में निराशा ही नसीब होती है क्योंकि वहाँ पर जल होता ही नहीं। वैसे ही जब तक इच्छित वस्तु या व्यक्ति न मिले तब तक उसमें सुख का दर्शन होता है और वस्तु या व्यक्ति का संपर्क होते ही थोड़े ही समय में उसमें से रुचि खत्म हो जाती है और दूसरी वस्तु या व्यक्ति में सुख का दर्शन होने लगता है । जिसके फलस्वरूप हमारा मन वस्तुओं के संग्रह तथा अनेकानेक व्यक्तिओं के पीछे आजीवन भागता रहता है, पर उसे अंत तक पता ही नहीं चलता कि सुख वास्तव में है कहाँ ? क्या ऐसे अतृप्तिकारक सुख को सच्चा सुख कहना चाहिये ?

(8) जैसे जो गलत आदतें सिखाते हो ऐसे लोगों के पास हम हमारे पुत्रों को नहीं भेजते, वैसे ही सच्चा सुख तो उसे ही कहना चाहिए, जो हमारे अंतरंग दोषों को बढ़ाने वाला न हो । जबकि इस संसार में प्रायः देखने को मिलता है कि जैसे-जैसे व्यक्ति साधन-संपन्न बनता जाता है, वैसे-वैसे उसमें विकार-वासना, क्रोध, अहंकार, माया, लोभ आदि दोषों से ग्रस्त बनने की संभावना बढ़ती ही जाती है । अतः जिसके आगमन के बाद हमारी सज्जनता और मानवता का सत्यानाश होता हो, ऐसे सुखों को सच्चा सुख कह सकते हैं क्या ?

तो यहाँ पर प्रश्न यह खड़ा होता है, कि **"ऐसा कौन सा सुख है...**

(1) जिसका निरंतर सेवन अरुचिकारक न बने ?

(2) जो दुःख के अंश मात्र से भी सर्वथा मुक्त हो ?

(3) जिसका अनुभव प्रतिक्षण किया जा सके ?

(4) जो सभी प्रकार के तन-मन के रोगों से मुक्त हो ?

(5) जिसे प्राप्त करने के लिये अच्छे नसीब, स्वस्थ शरीर, प्रसन्न मन या पदार्थों में से किसी की जरूरत न पड़े ?

(6) जिसका निरंतर निर्भयतापूर्वक उपभोग किया जा सके ?

(7) जो हमारी इच्छाओं को भड़काने वाला न हो ?

(8) और जो हमारी सज्जनता में बाधक न बने ?"

ऐसे विशिष्ट सुख को ही धर्मशास्त्रों में 'मोक्षसुख' कहा गया है । भले ही हम क्षणिक सुखों का उपभोग कर रहे हैं पर हमें इच्छा तो हमेशा शाश्वत सुख की ही रहती है । जैसे बंगला भी बनाना हो तो 7 पीढ़ी तक

गिरे नहीं वैसा ही बनाने का प्रयत्न करेंगे । क्या कभी विचार आया कि **"हमें सदा पूर्ण सुख की ही कामना रहती है, इसका कारण क्या होगा ?"** इसका कारण यह है कि जैसे श्रीमंत को भीख मांगना पसंद नहीं आता, वैसे ही हमारा जीव खुद अविनाशी और अनंत सुखमय है, अतः उसे विनाशी और दुःखयुक्त सुख पसंद ही नहीं आते । इसलिये खुद अविनाशी और अनंत सुखमय होने के कारण ही, वह इस संसार के विनाशी पदार्थों में भी निरंतर अविनाशी-संपूर्ण-भयमुक्त-दुःखमुक्त-चिंतामुक्त-पराधीनतामुक्त और तृप्तिकारक सुख को ही खोजता रहता है, क्योंकि अविनाशिता-संपूर्णता-दुःखरहितता-चिंतामुक्तता-स्वाधीनता-परमतृप्ति ये सब आत्मा का स्वभाव है ।

पर ऐसे विशिष्ट सुख को कैसे प्राप्त किया जाए ? इस बात का जब तक उसे ज्ञान नहीं होता, तब तक वह जैसे मिले वैसे इस संसार के कामचलाऊ सुखों से संतोष मान लेता है, पर जब उसे सच्चा ज्ञान मिलता है, तब उसे पता चलता है कि मैं जिसके पीछे दौड़ रहा हूँ, उसमें सुख का अंश भी नहीं है, मात्र और मात्र दुःख ही है, तब जैसे रास्ता भूले मुसाफिर को सही रास्ते पर लाने हेतु मात्र इशारा पर्याप्त होता है, वैसे ही ऐसा सच्चा ज्ञान प्राप्त करने के बाद उसे वास्तविक सुखों को प्राप्त करने की तीव्र अभिलाषा प्रकट होती है, और उसे प्राप्त करने हेतु जो कुछ भी करना पड़े, वह सबकुछ करने की तीव्र इच्छा उत्पन्न होती है और तत्पश्चात् वह सद्गुरु के संपर्क में रहकर सच्चे सुख स्वरूप मोक्षसुख को प्राप्त करने हेतु आगे बढ़ता है ।

यहाँ पर सबसे पहला प्रश्न यह खड़ा होता है, कि **"मोक्ष सुख पाने की बात तो दूर रही पर पहले तो यह बताओ कि हमारे शरीर**

में आत्मा है उसका सबूत क्या है ?'' क्योंकि जब तक आत्मा ही पकड़ में न आए तब तक उस आत्मा के मोक्ष की बात तो व्यर्थ ही है ।

हमारे शरीर में आत्मा है या नहीं? इसका जवाब यहाँ पर क्रमशः दिया जा रहा है।

१. हमारे हाथ में रही हुई घड़ी के लिये हम ऐसा कहते हैं कि 'यह मेरी घड़ी है' पर 'मैं घड़ी हूँ' ऐसा नहीं कहते क्योंकि घड़ी अलग है और हम अलग हैं। वैसे हमारे शरीर के लिये भी हम ऐसा कहते है कि 'यह मेरा शरीर है' पर 'मैं शरीर हूँ' ऐसा नहीं कहते। इसका मतलब यह हुआ कि शरीर अलग है, और उसके अंदर रहकर कहने वाला वह व्यक्ति अलग है, तो जो यह कह रहा है कि 'यह मेरा शरीर है' उस कहने वाले व्यक्ति का ही नाम है 'आत्मा' ।

२. वर्तमान में तो कोई भी व्यक्ति हिप्नोटिस्ट के पास जाकर हिप्नोटिजम (सम्मोहन विद्या)के द्वारा अपने पूर्वजन्म को आसानी से देख सकता है । यहाँ पर महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जो पूर्वजन्म का शरीर था वो तो नष्ट हो गया और वर्तमान में जो शरीर है वह तो पूरा नया ही है, तो इस नये शरीर में ऐसा कौन है जिसे अपना पूर्वजन्म याद आ रहा है ? वह जो है उसका ही नाम है 'आत्मा' ।

३. कोई भी नया काम करना हो तो पहले उसे सीखना पड़ता है, पर नए जन्मे हुए बच्चे को दूध पीना कौन सिखाता है ? कोई नहीं । फिर भी वह बिना सिखाए दुग्धपान की क्रिया में पारंगत बन जाता है, उसका कारण है पूर्वजन्म के संस्कार और उन संस्कारों का आधार है 'आत्मा'।

४. एक ही माता के एक साथ जन्मे हुए दो पुत्रों के स्वभाव-वैभव-आरोग्य-आयुष्य आदि अनेक बातों में दिन-रात का जो अंतर दिखाई पड़ता है उसका कारण है उनके पूर्वजन्म के कर्म और उन कर्मों का आधार है 'आत्मा'।

५. आत्मा की सिद्धि के लिये एक बहुत ही सुंदर फिल्म Youtube पर उपलब्ध है, जिसका नाम है 'Ek Cheez milegi wonderful'। उसके द्वारा भी हमें हमारे शरीर में रही हुई आत्मा का ज्ञान मिल सकता है तथा इसके सिवाय पुनर्जन्म से संबंधित वर्तमान के अन्य सैकडों वास्तविक प्रसंग भी इन्टरनेट पर उपलब्ध है ।

अब फिर अपनी मूल बात पर आते हैं। आप पूछेंगे, कि **"आत्मा को जहाँ पर प्रतिक्षण अनंत सुख प्राप्त होता है ऐसे अनंत सुखमय मोक्ष का स्वरूप क्या है ?"** तो इसका जवाब यह है कि जैसे प्रत्येक मुसाफिर की कोई अंतिम मंजिल होती है, वैसे प्रत्येक जीवात्मा की जो अंतिम मंजिल है उसका नाम है 'मोक्ष' । जैसे इस संसार में प्रत्येक वस्तु में अलग-अलग प्रकार की कक्षाएँ दिखती है, जैसे कोई अत्यंत गरीब है, कोई मध्यम गरीब है, कोई सामान्य गरीब है, कोई सामान्य श्रीमंत है, कोई मध्यम श्रीमंत है, कोई अत्यंत श्रीमंत है, तो कोई इतना श्रीमंत है कि जिसका कोई हिसाब ही न हो, वैसे ही क्रमशः सुख के बारे में भी समझना। इसमें जो अत्यंत सुखी है, जिनके सुख का कोई हिसाब ही न हो, ऐसे जीव जहाँ रहते हैं, उस स्थान का नाम है 'मोक्ष'।

जब हमें घर बदलना ही पड़े तो हम ऐसा स्थान पसंद नहीं करते जहाँ बहुत उपद्रव हो, पर ऐसा स्थान ही पसंद करते हैं जहाँ बिलकुल उपद्रव न हो, वैसे हमें भी मरकर कहीं जाना तो पड़ेगा ही और नया शरीर

भी धारण करना पड़ेगा । जैसे हम कपड़े बदलते हैं, वैसे ही हमारा जीव शरीर बदलता है और आत्मा अमर होने के कारण हमारा जीवन तो सदा चलता ही रहता है क्योंकि मात्र शरीर बदलता है, स्थल बदलता है, परिस्थितियाँ बदलती है, पर हमारी आत्मा कहाँ बदलती है ? तो जीना तो पड़ेगा ही जब यह निश्चित है, तो कैसा जीवन लेना ? सुखमय या दु:खमय ? अगर सुखमय जीवन ही जीने की इच्छा हो जो दु:ख के अंशमात्र से भी मुक्त हो, ऐसा जीवन जहाँ उपलब्ध है उस स्थान का ही नाम है 'मोक्ष' ।

रोग–बुढ़ापा–अपमान–दरिद्रता–चिंता–विश्वासघात–एक्सिडेंट–मौत आदि इस संसार का एक भी दु:ख हमें पसंद नहीं पर ये सब हमारे जीवन में आते ही रहते हैं, क्योंकि ये सब जन्म से बंधे हुए हैं । इन सबको अगर दूर करना हो तो सबसे पहले जन्म को दूर करना पड़ेगा और उसके लिये जन्मरहित स्थान अर्थात् 'मोक्ष' प्राप्त करना ही पड़ेगा, जहाँ पर हमें जो नापसंद है उसका कभी संपर्क ही न हो और हमें जो मनपसंद है वो प्रतिक्षण निरंतर मिलता ही रहे।

हमारे प्रत्येक कार्य में जो बाधक बनता हो ऐसा नौकर अगर फोकट में भी रहना चाहें तो हम उसे घर में नहीं रखते, उसी प्रकार हमारे मनपसंद कार्यों में जो विघ्न बनता हो ऐसे शरीर को भी रखना चाहिये या निकाल देना चाहिये ? जैसे रिसेप्शन में भोजन की 108 प्रकार की वेरायटी सामने होते हुए भी हम सभी को न्याय नहीं दे सकते क्योंकि शरीर साथ नही देता है । वैसे ही संगीत श्रवण, मोबाइल का उपयोग, मौज-मस्ती आदि कोई भी मनपसंद कार्य क्यों न हो पर अमुक समय के बाद रुकना ही पड़ता है क्योंकि हमारा शरीर हमें साथ नहीं देता है । तो जो शरीर हमारे प्रत्येक मनपसंद कार्य को करने में बाधक बनता हो ऐसे हरामखोर शरीर को पुष्ट करने में जीवन बरबाद करना चाहिये या जहाँ पर इस शरीर को छोडने के फलस्वरूप प्रतिक्षण अनंत सुख का अनुभव हमेशा के लिये होता हो ऐसा स्थान प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये । ऐसे शरीर रहित स्थान का ही नाम है 'मोक्ष'।

संसार के समस्त सुखों को अगर बिंदु जितना माना जाए तो मोक्षसुख प्राप्त करने वाले जीवात्मा को समुद्र से भी ज्यादा सुख का अनुभव प्रतिक्षण अनंतकाल तक होता ही रहता है । इस संसार में तो अनंतकाल में 1-2 बार ही मनुष्य आदि का अच्छा अवतार मिलता है और बाद में वापस कीड़े-मकोड़े जैसे दु:खमय अनंत अवतार ही लेने पड़ते हैं जबकि मोक्ष प्राप्त करने वाले जीवात्मा को फिर कभी इस धरती पर कोई अवतार लेना ही नहीं पड़ता । (मिट्टी के कण, जलबिंदु, धूल के कण आदि इस दुनिया में जिसको गिना जा सके ऐसे सजीव तथा निर्जीव जितने भी पदार्थ है उन सबको गिनने से जितनी संख्या होती है उस संख्या को उस संख्या के साथ उतनी ही बार गुना किया जाए तब जो संख्या आए उससे बड़ी संख्या को अनंत कहा जाता है । जैसे दस को दस के साथ दस बार गुनने से दस अरब होता है ।)

यहाँ पर हमें मानव जन्म मिला हो तो हर जन्म में ABCD से प्रारंभ करना पड़ता है, जबकि मोक्षसुख प्राप्त करने वाले जीव को अखिल

ब्रह्मांड के तमाम जीव–अजीव पदार्थों की भूत–भविष्य–वर्तमान रूप तीनों काल की अवस्था एक साथ देख सके तथा जान सके ऐसी विशिष्ट शक्ति जिसमें समाहित है, ऐसा Super Computer जैसा अविनाशी त्रिकालज्ञान प्रकट होता है और इसलिये ही ऐसे जीवों को जैनधर्म के अनुसार 'सर्वज्ञ' या 'भगवान' भी कहा जाता है ।

अब सवाल यह खड़ा होता है कि, **"ऐसा मोक्ष सुख मिलता है किसे ?"**

इसका जवाब यह है कि मोक्ष उसे ही प्राप्त होता है जो व्यक्ति धर्ममय जीवन जीता है। आप पूछेंगे कि, **"दुनिया में सैंकड़ों धर्म हैं तो कौनसा धर्म करने से मोक्ष मिलेगा? धर्म का वास्तविक मर्म क्या है यह कैसे पता चले ?"** इस सवाल के 2 जवाब है । पहला जवाब यह है कि, "आत्मा के अंदर रहे हुए दुर्गुण रूप विभाव से छुड़वाकर सद्गुण रूप स्वभाव में स्थिर करे उसका नाम है धर्म" तथा ऐसा धर्म ही मोक्षदायक बन सकता है ।

जिसके लिये किसी कारण की जरूरत न पड़े तथा जिसकी कोई मर्यादा न हो उसे 'स्वभाव' कहते हैं । जैसे दिमाग को शांत रखने के लिये किसी कारण की जरूरत नहीं पड़ती तथा हम चाहें तो आजीवन अपने दिमाग को शांत रख सकते है क्योंकि शांति हमारा स्वभाव है, जबकि क्रोध किसी कारणवश ही उत्पन्न होता है तथा उसे हम 24 घंटे कर भी नहीं सकते और कुछ समय के बाद शांत होना ही पडता है क्योंकि क्रोध हमारा विभाव है ।

हम झूठ तो कारणवश ही बोलते है, बाकी तो सत्य ही बोलते है । यानी सत्य-सरलता-त्याग-अहिंसा-औचित्य-नम्रता-क्षमा-ब्रह्मचर्य आदि सद्गुणों में स्थिरता रूप जो सत्कर्म हम अपने जीवन में 90% कर ही रहे है, उसे 100% तक पहुँचाए तथा असत्य-कपट-भोग-हिंसा-अनौचित्य-क्रोध-वासना आदि दुर्गुणों के प्रगटीकरण स्वरूप जो गलत कार्य हम प्रसंगवश 5-10% करते रहते हैं, उसे 0% तक पहुँचाए उसका नाम है धर्म । अर्थात् जो-जो कार्य हमारे अंदर दुर्गुणों का नाश तथा सद्गुणों का विकास करते हों, ऐसे कार्यों को ही 'धर्म' कहा जाता है तथा ऐसे कार्य करते रहने से दुर्गुण जब 0% तक पहुँच जाए, तथा सद्गुण 100% तक पहुँच जाए ऐसी अवस्था जब प्राप्त हो जाए उस अवस्था को ही 'मोक्ष' कहा जाता है ।

धर्म किसे कहते हैं ? इसका दूसरा जवाब इस प्रकार है । जैसे कोई हमें मारे, हमसे झूठ बोले, हमारी वस्तुओं की चोरी करे, हमारी माँ-बहनों पर आँख उठाएँ अथवा ऐसा कोई भी व्यवहार करे कि जिससे हम नाराज हो जाए तो वह कार्य हमें पसंद नहीं आता। वैसे हमें भी किसी को मारना नहीं चाहिए, किसी से झूठ नहीं बोलना चाहिए, दूसरों के वस्तुओं की चोरी नहीं करनी चाहिए, दूसरों की माँ-बहनों पर आँख नहीं उठानी चाहिए अथवा दूसरे जिससे नाराज हो जाए ऐसा एक भी बर्ताव नहीं करना चाहिए और मात्र मनुष्यों के साथ नहीं पर जीव मात्र के साथ भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए क्योंकि जैसे हमें दुःख पसंद नहीं है वैसे ही जीव मात्र को भी दुःख पसंद नहीं है। हमें जो पसंद न हो वैसा किसी के साथ भी न करना यही शाश्वत धर्म है ।

अब आपने जो सवाल पूछा था कि आत्मा **को परमात्मा बनाए ऐसा अनंत सुखदायी 'मोक्ष' किसे मिलता है ?**

इसका जवाब यह है कि समस्त धर्मग्रंथों के अनुसार मोक्ष एक ऐसा स्थान है, जिसमें समस्त दुर्गुणरहित आत्माओं को ही प्रवेश मिलता है । अब दुनिया का एक नियम है कि, ''हमें जिस फिल्ड में जाना हो उसकी ही प्रेक्टिस करनी पड़ती है।'' जैसे डॉक्टर बनना हो तो डॉक्टरी का ही कोर्स करना पड़ेगा । इस नियम अनुसार मोक्षसुख भी वही प्राप्त कर सकेगा जो यहाँ अहंकार-क्रोध-माया-लोभ आदि अंतरंग दोषों को जीतने के लिये निरंतर प्रयत्नशील होगा और उसके लिए ऐसे वातावरण में ही रहना जरूरी है, जिसमें पुराने दुर्गुणों का नाश होता रहे और नए उत्पन्न ही ना हो ।

हालांकि, भारतभूमि 'बहुरत्ना वसुंधरा' होने के कारण अन्य पंथों में भी ऐसा दुर्गुणनाशक तथा सद्गुणपोषक शुभ वातावरण कहीं-कहीं हो भी सकता है पर हमारे ध्यान में जो आया वह है 'भगवान महावीर के द्वारा बताया गया संयम जीवन' । जिसमें जिनके-जिनके संपर्क से हमारा जीव दुर्गुणी बनता हो उन अशुभ संयोगों का सर्वथा त्याग तथा सद्गुणपोषक शुभ संयोगों का सर्वथा स्वीकार करने में आता है और जिसका वफादारीपूर्वक पालन करने से व्यक्ति ज्यादा से ज्यादा 7-8 जन्म में आसानी से मोक्षसुख प्राप्त कर सकता है और साधना अगर जोरदार हो तो 2-3 जन्म ही पर्याप्त है ।

वर्तमान में होने वाली जैन दीक्षाओं को देखकर बहुत लोगों के मन में यह सवाल खड़ा होता है कि, **''इन लोगों के पास इतना सारा धन-वैभव है फिर भी सब कुछ छोड़कर क्यों निकल पड़ते हैं ?''** इसका जवाब अब आपको पता चला होगा कि ये लोग जो छोड़ रहे हैं, वह बिंदु तुल्य भी नहीं है और इस दीक्षा के फलस्वरूप जो प्राप्त करेंगे वह समुद्र से भी ज्यादा होगा ।

सनातन सत्य स्वरूप यह मोक्षमार्ग अनादि काल से प्रवर्तमान है और भविष्य में भी अनंतकाल तक रहने वाला है । आज तक इस मार्ग पर चलने वाले अनंतानंत जीवात्मा दुर्गुणमुक्त बनकर 'भगवान' बन चुके हैं और भविष्य में भी बनते ही रहेंगे ।

वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति में 'भगवान' बनने की योग्यता विद्यमान है, पर हम खुद, आत्मा की अनंत शक्तिओं को पहचान नहीं सकने के कारण ही पशु-नरक आदि विविध अवतारों को धारण कर अनादिकाल से इस दुःखमय संसार में भटक रहे हैं । हम अगर मन में ठान लें तो हमारे जन्म-मरण आराम से बंद हो सकते हैं, क्योंकि वापस जन्म कहाँ लेना वह हमारे हाथ में नहीं है, पर वापस जन्म लेना या नहीं, यह तो हमारे हाथ में ही है ।

अनंतकाल से हमारे जन्म-मरण प्रवर्तमान है, इसका कोई मुख्य कारण है तो वह है वातावरण । जल को जिस प्रकार के बर्तन में रखा जाए वैसा ही आकार वह धारण कर लेता है, वैसे हमारा जीव भी निमित्तवासी है, वह शुभ-अशुभ जिस प्रकार के वातावरण में रहता है, पाँच इन्द्रियों द्वारा वैसा ही ग्रहण करना शुरू कर देता है । जैसा ग्रहण करता है, वैसा विचार करने लगता है। जैसे विचार हो उसी अनुसार प्रवृत्ति करने लगता है, जैसी प्रवृत्ति हो वैसे संस्कार पड़ते हैं, और जैसे संस्कार हों वैसे ही वापस अवतार मिलने लगते हैं और बाद में उन अवतारों की परंपरा शुरू हो जाती है ।

अगर शुभ वातावरण हो तो फलस्वरूप वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है और अगर अशुभ वातावरण हो तो उसके फलस्वरूप वह अनंतकाल तक इस दुःखमय संसार में ही भटकता रहता है । इसलिये हमें अगर हमारे जन्म-मरण बंद करने हों तो सबसे पहले जिससे हमारे विचार अपवित्र बनते

हो ऐसे अशुभ वातावरण का सदा के लिये त्याग करना ही पड़ेगा । इस प्रकार वास्तव में अगर देखा जाए तो जिसने अनिच्छापूर्वक भी मन को अशुभ विचारमय बनाने वाले अशुभ वातावरण का सदा के लिये त्याग कर दिया हो उसने 90% सफलता तो यहीं पर प्राप्त कर ली । अब जो 10% काम बाकी है वह तो शुभ वातावरण के प्रभाव से सहज ही हो जाएगा ।

भविष्य के 50 वर्ष सुखमय व्यतीत हो, इसलिये प्रारंभ के 25 वर्ष शिक्षण आदि में कठोर मेहनत करने वाले हम, हमारी मृत्यु के बाद के अनंतकाल को सुधारने के लिये कुछ करना चाहिये या नहीं ? हमारे शरीर में रही हुई जिस आत्मा के आधार पर हमारा संपूर्ण जीवन मस्ती से चल रहा है, उस आत्मा की चिंता हमें करनी चाहिये या नहीं ?

आप कहेंगे कि, **"हम तो जो दिखे उसे ही मानते हैं, मोक्ष में प्रतिक्षण अनंत सुख है, वह किसने देखा है ? यह बात हमारे दिमाग में बैठ़ती नहीं है । फिर भी, 'मोक्ष प्राप्त करना ही चाहिए,' इस बात की पुष्टि करे ऐसा कोई तर्क है ?"** हाँ, है । और वो यह है, कि मोक्ष में अनंत सुख है या नहीं उसे बाजू में रखो, पर संसार में तो दु:ख के सिवाय कुछ भी नहीं, यह तो प्रत्यक्ष ही है । जितने भी पशु-पक्षी है, जीव-जंतु है, उनमें से कौन सुखी दिख रहा है ? और जो मनुष्य है उनमें भी 90% तो दु:खी ही है और जो 10% सुखी दिख रहे हैं उनके पास भी मानसिक शांति कहाँ है ?

ऐसे घोर दु:ख भरे संसार में बार-बार जन्म लेने में कौन-सी बुद्धिमानी है ? आने वाले जन्म में केंसर के रोग से युक्त धनवान अथवा संपूर्ण स्वस्थ मजदूर इन दो में से एक अवतार लेना ही पड़े, तो हम कौन सा लेना चाहेंगे ? स्वस्थ मजदूर का ही, क्योंकि धन का सुख नहीं मिलेगा

तो चलेगा, पर रोग का दुःख तो किसी को भी पसंद नहीं आता । वैसे मोक्ष में अनंत सुख है यह दिमाग में भले ना बैठे, तो भी वहाँ दुःख तो बिलकुल नहीं है इसलिये भी हमें वहाँ पर जाना ही चाहिए, यह बात तो दिमाग में बैठ सकती है ना ?

वापस आप कहेंगे कि, **"मोक्ष में खाने-पीने की, मौज-मजा करने की एक भी वस्तु नहीं है, तो वहाँ वस्तुओं के बिना हम जीएँगे कैसे ?"** इसका जवाब यह है कि जैसे हमें ठंडी की सीजन में A.C. या कूलर की जरूरत नहीं पड़ती, गरमी में हीटर की जरूरत नहीं पड़ती, क्योंकि वातावरण ही पहले से ठंडा या गरम है । अर्थात् नियम यह हुआ कि, 'वस्तु से मिलने वाला सुख अगर हाजिर हो तो वस्तु की जरूरत नहीं रहती।' इस नियम अनुसार अगर देखा जाए तो मोक्ष प्राप्त करने वाले जीवों को इस संसार की एक भी वस्तु की जरूरत नहीं पड़ती क्योंकि इस विश्व की सभी वस्तुओं से जितना सुख प्राप्त होता है, उससे अनंतगुणा ज्यादा सुख का अनुभव वे प्रतिक्षण करते ही रहते हैं । तो जहाँ सुख ही हाजिर है वहाँ वस्तुओं की जरूरत ही कहाँ पड़ेगी ? और वस्तुओं की आवश्यकता शरीरधारी को पड़ती है, वहाँ पर शरीर ही नहीं है तो वस्तुओं का भी क्या करना ?

पूर्वजन्मों में दुःखों को हँसते हुए सहन किया हो तो ही यहाँ पर वर्तमान जीवन में सुख प्राप्त होते है तथा वर्तमान के सुखों का जो रसपूर्वक उपभोग करे उसे मृत्यु के पश्चात् भयंकर दुःख प्राप्त होते है तो जिन सुखों के आगे-पीछे समुद्र जितना दुःख ही दुःख है और मध्य में मात्र बिंदु जितना काल्पनिक सुख है ऐसे क्षणिक तथा अनंत दुःखदायक सुखों के लिये हम अपने जीवन को व्यर्थ क्यों करें ।

दूसरी बात कि इस संसार में हमारी जितनी भी समस्याएँ हैं जैसे कि हमारा कोई जानी दुश्मन हो, हमारे शरीर में कोई बड़ा रोग हो, हम आजीवन कैद में हो, ऐसी बहुत सारी समस्याओं में से हमारी एक भी समस्या अगर कम हो जाए तो भी हमें आनंद की अनुभूति होती है, तो जहाँ पर जाने के बाद हमारी पुरानी सभी समस्याएँ समाप्त हो जाए और भविष्य में कोई नई समस्या कभी उत्पन्न ही न होती हो ऐसे जीवों का आनंद कितना होगा ?

प्रत्येक जीव को यह ६ इच्छाएँ निरंतर होती ही रहती है । जो क्रमशः इस प्रकार है....

१) मुझे इस विश्व की सभी बातों का ज्ञान हो ।

२) मुझे इस विश्व के सर्वोच्च सुख मिलें ।

३) मेरे जीवन में कभी कोई दुःख न आए ।

४) मुझे इस विश्व का सर्वोच्च पद मिले ।

५) मुझे कभी किसी की गुलामी न करनी पडे ।

६) तथा सभी लोग मेरी बात सुने ।

यदि आप हमेशा के लिए इन छः इच्छाओं को पूर्ण करना चाहते हैं तो मोक्ष ही प्राप्त करना पड़ेगा क्योंकि... (१) मोक्ष प्राप्त जीवों को त्रिकालज्ञान होने से उन्हें इस विश्व का संपूर्ण ज्ञान होता है । (२) शरीर आदि कोई रुकावट न होने के कारण (अर्थात् शरीर रहित होने के कारण) प्रतिक्षण सर्वोत्कृष्ट कक्षा के अनंत सुख का अनुभव उन्हें होता ही रहता है । (३) शरीर ही नहीं है इसलिये दुःख का भी हमेशा के लिए अंत आ जाता है । (४) इस विश्व का सर्वोच्च पद अर्थात् परमात्म पद प्राप्त होता है । (५) किसी भी प्रकार की आवश्यकता बाकी न होने के कारण किसी

की गुलामी करने की कभी जरूरत नहीं पडती है । (६) जिस प्रकार राजा की आज्ञा को जो नहीं मानते वे सजा पाते हैं तथा जो मानते हैं वे सुखी बनते हैं। वैसे अपने त्रिकालज्ञान में देखकर प्रभु ने जो बातें कही हैं उन्हें जो नहीं मानते वे दुःखी बनते हैं तथा जो मानते हैं वे सुखी बनते हैं । इस प्रकार समस्त जीवों के लिये मार्गदर्शक होने से मोक्षगामी जीव इस विश्व का नेतृत्व धारण कर रहे हैं एवं जो-जो जीव उनकी बात जाने-अनजाने में भी स्वीकार कर रहे हैं वे सभी सुखी बन रहे हैं ।

आत्मा में रहे हुए अहंकार-कपट आदि समस्त दोषों को जो जीत ले उसे 'जिन' कहा जाता है और ऐसे 'जिन' में जो मुख्य हो तथा दूसरों को भी दोषमुक्त बनने का मार्ग जो बताते हों उसे ही 'जिनेश्वर', 'सर्वज्ञ', 'तीर्थंकर', 'अरिहंत' या 'भगवान' कहा जाता है और ऐसे भगवान बने हुए क्षत्रियवंशज प्रभु महावीर स्वामी आदि 24 जिनेश्वरों ने (तीर्थंकरों ने) आत्मा में रहे हुए दुर्गुणों को नाश करके मोक्षसुख प्राप्त करने का जो मार्ग बताया है उसे ही वास्तव में 'धर्म' कहते हैं ।

इस प्रकार देखा जाए तो भगवान महावीर स्वामी के द्वारा बताया हुआ धर्म, यह मात्र एक धर्म ही नहीं, परंतु जिन-जिन कारणों से हमारा इस संसार में अनंतकाल से परिभ्रमण चल रहा है उन कारणों से मुक्त बनकर मोक्षसुख प्राप्त कर आत्मा को परमात्मा बनाने की एक संपूर्ण वैज्ञानिक प्रक्रिया है और इसीलिए ही इस मार्ग पर चलने वाला चाहे किसी भी जाति या कुल का व्यक्ति क्यों न हो ? वह खुद को दुर्गुणमुक्त बनाकर मोक्षसुख प्राप्त कर सकता है और 'भगवान' बन सकता है ।

आपको विचार आता होगा कि, **''वर्तमान में किसी को मोक्षसुख मिला हो ऐसा कहाँ दिखता है ?''** उसका जवाब यह है कि

वर्तमान में हम जहाँ रहते हैं, उस भाग में मोक्षसुख की प्राप्ति बंद है, जो 81 हजार वर्ष बाद शुरू होगी । पर यहाँ से उत्तर दिशा में प्राय: 25 करोड़ कि.मी. दूर महाविदेह नाम का क्षेत्र है, जहाँ सर्वदोषमुक्त बनकर भगवान बने हुए श्री सीमंधरस्वामी आदि 20 जिनेश्वर भगवंत आज भी जीवंत अवस्था में विचरण कर रहे हैं । वहाँ हमेशा मोक्षसुख की प्राप्ति सुलभ है ।

वर्तमान में यहाँ पर अपनी भूमि में अच्छी तरह साधना करने वाला व्यक्ति, आने वाले जन्म में महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर वहाँ से मोक्षसुख प्राप्त कर सकता है । वैज्ञानिक भी कहते हैं कि हमारी पृथ्वी जैसे करोड़ों क्षेत्र है, पर हमारी शक्ति न होने के कारण हम वहाँ तक पहुँच नहीं सकते । पर हम अगर चाहे तो आने वाले जन्म में महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर 2-3 जन्म में आसानी से मोक्षसुख प्राप्त कर सकते हैं ।

आप पूछेंगे कि, **''ये सब बातें सच है उसका क्या सबूत है ?''** उसका जवाब है **''पुरुष विश्वासे, वचन विश्वास:''** कहने वाला कौन है? उसके आधार पर निश्चित होता है कि बात सच्ची है या झूठी । जैसे-जैसे विज्ञान आगे बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे जिनकी बहुत सारी बातें क्रमश: सत्य साबित होती जा रही है ऐसे, और आज से 2600 वर्ष पहले जन्मे हुए तथा दुर्गुणमुक्त बनने की साधना के बल पर त्रिकालज्ञानी बने हुए, सर्वज्ञ भगवान महावीर ने ये सब बातें अपने त्रिकालज्ञान से देखकर कही है, और उन्होंने वर्तमान विश्व के संदर्भ में जो भी कहा है, जैसे कि - ''आत्मा तथा पुनर्जन्म है, शब्द एक पदार्थ है जिसे ग्रहण किया जा सकता है, वनस्पति खुद एक जीव है,'' ऐसी सैकड़ों बातें विज्ञान-अनुभव-बुद्धि-परंपरा आदि के द्वारा अगर सत्य साबित होती जा रही हो और आज तक एक भी वैज्ञानिक 'सर्वज्ञ

भगवान महावीर' की एक भी बात को गलत साबित न कर सका हो, तो उन्होंने अदृश्य जगत के बारे में जो बातें कही है जैसे कि ''स्वर्ग-नरक-पुण्य-पाप-मोक्ष आदि तत्त्व हैं'', ये सब बातें झूठी है ऐसा हम कैसे कह सकते हैं ? उन्होंने अपने त्रिकालज्ञान के द्वारा इस विश्व का स्वरूप जैसा देखा वैसा ही हमें बताया । उन्होंने एक भी नियम नये नहीं बनाए परंतु इस विश्व के अंदर जो नियम बने हुए है वे ही हमें बताए हैं । बाकी जिन्हें विशेष जानने की जिज्ञासा हो उन्हें सद्गुरु के संपर्क में रहकर धर्म के वास्तविक सिद्धांतों का गहराई पूर्वक अभ्यास करना चाहिए ।

यहाँ पर आप कहेंगे कि **''इस संसार में परोपकार के द्वारा दूसरों को सुखी करने का काम छोड़कर खुद को सुखी बनाने के लिये दीक्षा लेकर मोक्ष में चले जाना यह तो स्वार्थी लोगों का काम है। ऐसे स्वार्थी बनने के बदले इस संसार में ही रहकर दीन-दुःखियों की सेवा आदि परोपकार के कार्य क्यों न करें ?''**

इसका जवाब यह है कि जैसे कत्लखाने जाने वाले पशु को भोजन-दवा या आभूषण से भी खुद का जीवन अधिक प्रिय है और जो उसे कत्लखाने से छुड़वाए वो ही उसका सबसे बड़ा उपकारी कहलाता है । वैसे ही इस संसार में रहकर किसी को भोजन-वस्त्र या मकान आदि की मदद करने से भी ज्यादा, हमारे द्वारा एक भी जीव का हनन न हो ऐसे स्थान पर चले जाना ही सबसे बड़ा उपकार है, क्योंकि जीव मात्र को सबसे प्यारी कोई भी चीज है तो वो है खुद का जीवन, और जो व्यक्ति किसी भी जीव की मृत्यु का कारण न बने वो ही इस विश्व में सबसे बड़ा उपकार कर रहा है । जबकि इस संसार में जब तक हम जन्म लेते रहेंगे, तब तक हमें जिंदा रहने के लिये प्रतिक्षण असंख्य जीवों को कुरबान करना पडेगा क्योंकि

पृथ्वी–जल–अग्नि–वायु–वनस्पति आदि के असंख्य जीवों की कब्र खोदे बिना इस संसार का एक भी सुख प्राप्त नहीं होता और इस प्रकार अगर देखा जाए तो इस संसार में दुःख बहुत है परंतु उन दुःखों से बचने के लिये हमें मोक्ष नहीं प्राप्त करना है, क्योंकि यह तो कायरों की विचारधारा है । पर इस संसार में दूसरों को दुःख दिये बिना हम जी नहीं सकते इसलिये मोक्ष प्राप्त करना जरूरी है, क्योंकि मोक्ष ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पर चले जाने के बाद हमारे द्वारा कभी कोई दुःखी नहीं बनता और सज्जन तो उसे ही कहते हैं जो कभी किसी को अनावश्यक दुःख न पहुँचाए । अर्थात् हमें अगर हमारी सज्जनता टिकानी हो तो उसके लिये भी मोक्ष में ही जाना पडेगा ।

आप कहेंगे, कि **"सब बात सही, पर "दीक्षा स्वीकार" यह कोई बच्चों का खेल तो नहीं । आजीवन इतना सारा कष्ट कैसे सहन हो सकता है ?"** इसका जवाब यह है कि मान लो कि हमें थर्ड स्टेज का केंसर हुआ हो, तो मरने से बचने के लिये डॉक्टर के सभी निर्देशों को मानेंगे या नहीं ? जो एक बार भी मरने से बचाए उसके सभी निर्देशों को मानने के लिये अगर हम तैयार हो सकते हैं, तो भविष्य में अनंत बार मरने से बचाए ऐसा कोई मार्ग हो और उसके लिए 2-3 जन्म तक अगर थोडा–बहुत सहन करना पड़े तथा मात्र हमारी बुराइयों को बढ़ाने वाले निमित्तों का जिसमें त्याग होता है, ऐसा जीवन जीना हो तो उसमें हर्ज ही क्या है ?

और दूसरी बात कि "दीक्षा लेनी तो पड़ेगी ही और कष्ट सहन भी करने तो पड़ेंगे ही । पर 2-3 जन्म में छुटकारा हो जाए ऐसी दीक्षा लेनी है ? या मृत्यु के बाद प्राप्त होने वाले अनंत जन्म में इच्छा बिना भी अनंत बार पालनी पड़े ऐसी दीक्षा लेनी है ?" उसका निर्णय हमें ही करना पड़ेगा ।

आप पूछेंगे कि **''दीक्षा का पालन करना ही पड़ेगा और वो भी अनंत बार, ऐसा क्यों ?''** इसका जवाब यह है, कि ''दीक्षा अर्थात् संपूर्ण गुरु समर्पण–अर्थात् जहाँ खुद की इच्छानुसार नहीं, पर गुरु की इच्छानुसार ही जीवन जीना पड़ता है । दीक्षा यानी गोचरी चर्या–अर्थात् जब भी भूख लगे और सहन न हो तब गृहस्थों के घरों में जाकर प्रत्येक घर में से थोड़ा–थोड़ा ग्रहण करते हुए खुद का निर्वाह करना । दीक्षा यानी व्यसन तथा मनोरंजन के साधनों का संपूर्ण त्याग । दीक्षा अर्थात् ठंडी–गरमी–भूख–प्यास आदि कष्टों को सहन करना । दीक्षा यानी खुद के सिर तथा दाढी–मूँछ के बालों को हाथ से खींचकर निकालना । दीक्षा अर्थात् वाहनों का संपूर्ण त्याग तथा पैदल विहार करना । दीक्षा यानी अल्पतम नींद तथा अधिकतम जागृत रहने हेतु प्रयत्नशील जीवन । दीक्षा यानी वर्तमान के समस्त इलेक्ट्रोनिक्स–इलेक्ट्रीकल साधनों का त्याग कर संपूर्ण कुदरतमय जीवन जीना । दीक्षा अर्थात् पाँच इन्द्रियों को सुखदायक तथा आत्मा को दुःखदायक ऐसे भोगसुखों का संपूर्ण त्याग । दीक्षा यानी सुख आए या दुःख आए पर प्रत्येक परिस्थिति में खुद के मन को पूरी तरह अलिप्त रखने का भगीरथ पुरुषार्थ ।

यहाँ पर 'संयम जीवन' का जैसा वर्णन किया है उसे 'भगवान महावीर के द्वारा बताई हुइ दीक्षा' कहते हैं । ऐसी 'दीक्षा' पालने वाले लोग आज भी हजारों की संख्या में मौजूद है तथा जो ऐसी कष्टमय दीक्षा पालता है उसका 2-3 जन्मों में इस संसार से तथा जन्म–मरण से हमेशा के लिये छुटकारा हो जाता है पर जो लोग कष्ट के डर से ऐसी 'दीक्षा' नहीं पालते और क्षणिक भोगसुखों में डूबे रहते हैं उन्हें मृत्यु के बाद पशु तथा नरक आदि खराब अवतारों में ऐसा कष्ट मजबूरन सहन करना ही पड़ता है और वो भी मोक्ष न मिले तब तक अनंत बार । जैसे कि पशु के जन्म में वे

उनकी इच्छानुसार कुछ कर ही नहीं सकते । भूख–प्यास को मिटाने के लिये पूरे दिन यहाँ से वहाँ भटकना ही पड़ता है । व्यसन तथा मनोरंजन के साधन तो स्वप्न के विषय ही बन जाते हैं । ठंड़ी–गरमी आदि कष्ट सहन करने ही पड़ते हैं। दीक्षा में तो बाल ही खींचने पड़ते हैं पर पशुओं की तो खाल भी खींच ली जाती है, कत्लखानों के दृश्य देखो तो पता चल जाएगा । आजीवन पैदल ही चलना पड़ता है । कोई उन्हें मार न डाले इसलिये उन्हें निरंतर जागृत रहना ही पड़ता है तथा समस्त साधनों के बिना संपूर्ण कुदरतमय जीवन ही जीना पड़ता है । पाँच इन्द्रिय के अनुकूल भोगसुख तो जीवन में देखने भी नहीं मिलते तथा प्रत्येक परिस्थिति में मन को मना लेना पडता है ।

अर्थात् सहन तो करना ही पड़ेगा पर 2-3 जन्मों तक ही करना है या अनंत जन्मों तक, वो हमारी इच्छा पर निर्भर है । अगर हमें दुःख पसंद नहीं तो भविष्य में कम से कम दुःख मिले, ऐसा काम करने में ही बुद्धिमानी है तथा 'दीक्षा' यानी बिंदु जितने दुःख के बदले सिंधु जितने दुःख से हमेशा के लिये छुटकारा । साधु जीवन में तो मात्र थोड़ा सा शारीरिक कष्ट है किंतु साथ में प्रतिक्षण अपार आनंद भी है जब कि पशु जीवन में तो आनंद का अंश भी नहीं और दुःख तो पारावार है । तो अब आप ही बताओ कि बिना इच्छा के भी दीक्षा लेनी चाहिये या नहीं ?

''अब दुर्गुणमुक्त बनने के लिए जिसे आगे बढ़ना हो उसे दीक्षा स्वीकारनी चाहिए परंतु जो 'दीक्षा' लेने हेतु वर्तमान में समर्थ न हो उसका क्या ?'' उसका भी विकल्प है । दीक्षा न ले सके तब तक खुद के दुर्गुणों का नाश करने के लिये यथाशक्ति उसे प्रयत्न करना चाहिए । संसार में रहकर दुर्गुण नाश करने हेतु प्रयत्नशील जीवन को ही 'श्रावक जीवन' कहा जाता है और ऐसे श्रावक बनने वाले जीवात्मा को

जिसके बिना चल सके तथा जो आत्मा को दुर्गुणग्रस्त बनाते हों ऐसे तमाम अशुभ निमित्तों को छोड़ने के लिये निरंतर जागृत रहना चाहिए ।

अब आता है महत्त्व का प्रश्न और वो यह है, कि **"दुर्गुणमुक्त बनने का प्रयत्न करने से मोक्षसुख तो अंत में मिलेगा पर वर्तमान जीवन में इसका क्या फायदा ?"** इसका जवाब यह है कि ऐसा पवित्र जीवन जीने वाले व्यक्ति के अंतर में रहे हुए विकार-वासना-क्रोध-अहंकार-माया-लोभ आदि दोष कम हो जाने के कारण उसमें वस्तुओं पर का ममत्व और व्यक्तिओं का अंधा आकर्षण बहुत ही घट जाता है और हृदय में समस्त जीवों के प्रति मैत्री और वात्सल्यभाव उछलने लगता है । वो इस संसार में मालिक नहीं पर मेहमान बनकर जीना सीख लेता है जिसके फलस्वरूप उसके जीवन में चाहे कितने भी उतार-चढ़ाव क्यों न आए, उसका मन सदा हर्ष-शोक से मुक्त बनकर समभाव और प्रसन्नता युक्त ही रहता है । ऐसे व्यक्ति को टेंशन-डिप्रेशन आदि क्या चीज है ? उसका स्वप्न में भी अनुभव नहीं होता ।

दूसरी बात कि आज का विज्ञान भी अब धीरे-धीरे मानने लगा है कि हमारे शरीर के बहुत सारे रोगों का मूल भी हमारे मन में ही पड़ा हुआ है । मन जितना ज्यादा दुर्गुणों से ग्रस्त-शरीर भी उतना ही ज्यादा रोगों से त्रस्त । इसके सामने दुर्गुणमुक्त बनने का प्रयत्न करने वाले साधक का मन सदा शांत और प्रसन्न होने के कारण वह बहुत सारे शारीरिक और मानसिक रोगों से सहज रूप से बच जाता है और दीर्घायु बनता है । पर इसके लिये उसे वर्तमान के मिलावटी पदार्थों से युक्त तथा रसायनिक खाद और शरीर के लिये हानिकारक जंतुनाशकों से निर्मित अन्न का तथा तन-मन को नुकसान पहुँचाए ऐसी वर्तमान की विचित्र जीवनशैली का त्याग करना भी जरूरी है अन्यथा कभी भी केंसर जैसे रोग हो सकते हैं ।

गरीब भी अगर गुणवान हो, परोपकारी तथा दूसरों की मदद करने वाला हो तो लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और अमीर होने के बावजूद अगर कोई कंजूस-स्वार्थी-लोभी हो तो लोग उसकी निंदा करते हैं । धनवान बनना हमारे हाथ में नहीं क्योंकि उसके लिये नसीब चाहिए पर गुणवान बनना तो हमारे हाथ में ही है क्योंकि वह पुरुषार्थजन्य है । दुनिया भले कॅरियर बनाने के पीछे पागल है पर लोग तो उसे ही याद करते हैं जिसका केरेक्टर महान हो । यानी कि वर्तमान में यश-कीर्ति-लोकप्रियता आदि की आकांक्षा हो तो भी गुणवान ही बनना पड़ेगा ।

और एक मुख्य बात - इतना सब समझने के बाद भी आप कहेंगे कि **''दुनिया तो उसे ही सुखी मानती है जिसके पास पैसा है । क्या दुर्गुणमुक्त बनने से तथा इच्छाओं को घटाने से पैसा मिलता है ?''** इसका जवाब है, हाँ । अवश्य मिल सकता है । आप जरा सोचो कि इस दुनिया में सुखी कम और दु:खी ज्यादा है उसका कारण क्या है ? क्या इस बात का कभी विचार किया ? समृद्ध जीव कम है कारण कि अहिंसक, परोपकारी, निस्पृही और सद्गुणी जीव कम है और दु:खी तथा गरीब ज्यादा है कारण कि हिंसक, स्वार्थी, लोभी और दुर्गुणी जीव ज्यादा है । इससे सिद्ध होता है कि आर्थिक रूप से भी अगर सुखी बनना हो तो उसके लिये इच्छाओं का तथा दुर्गुणों का त्याग कर सद्गुणी ही बनना पड़ेगा ।''

हमारे शास्त्रों में लिखा है कि जैसे-जैसे व्यक्ति खुद की सांसारिक इच्छाओं को तथा दुर्गुणों को घटाने लगता है वैसे-वैसे उसकी योग्यता बढ़ने लगती है, और योग्यता बढ़ने के कारण उसे सभी प्रकार की समृद्धियाँ सामने से मिलने लगती है तथा जैसे-जैसे वह समृद्धि प्राप्त करने की इच्छा वाला बनने लगता है वैसे-वैसे उसकी अयोग्यता के कारण मिली हुई

समृद्धियाँ भी उसके पास से धीरे-धीरे दूर चली जाती है । एक कहावत भी है, ''त्यागे उसके आगे, मांगे उससे दूर भागे'' । ऐसा होने से जिसे वर्तमान जन्म में तथा मरने के बाद अगले जन्म में भी भौतिक पदार्थों से समृद्ध बनने की इच्छा हो उसे स्वप्न में भी इन सांसारिक पदार्थों की इच्छा नहीं रखनी चाहिए और इसके लिये अत्यंत आवश्यक वस्तुओं के अलावा एक सूई का भी संग्रह नहीं करना चाहिए ।

तो फिर आप पूछेंगे, कि **''वर्तमान में जो दिख रहा है कि बहुत सारे लोग ऐसे हैं जिनके जीवन में सद्गुण कम और दुर्गुण ज्यादा है, मन में दुनिया भर की इच्छाएँ भरी पड़ी है, फिर भी वे धन-वैभव से समृद्ध दिख रहे हैं, उसका क्या कारण ?''** इसका जवाब यह है कि अनाज की टंकी में पहले सुगंधित बासमती चावल डाले हो, बाद में सड़े हुए बाजरे का धान डाला हो तब टंकी के नीचे के छेद में से पहले सुगंधित बासमती चावल ही बाहर आएँगे वैसे जिन्होंने अपने पूर्व जन्मों में कुछ न कुछ सद्गुणों की उपासना की हो, परोपकार के कार्य किये हो, उन्हें ही वर्तमान में समृद्धि मिली है और वर्तमान में जो उलटे काम कर रहे हैं, उसका फल उन्हें भुगतना तो पड़ेगा ही । बाकी दुर्गुणियों को भी अगर समृद्धि मिलती होती तो समृद्ध लोग हमेशा ज्यादा ही दिखने चाहिए क्योंकि दुर्गुणी हमेशा ज्यादा ही होते हैं । जबकि प्रत्यक्ष दिख रहा है कि समृद्ध जीव कम है क्योंकि सद्गुणी, अहिंसक तथा परोपकारी जीव कम है और इसलिये ही वर्तमान में चिंतामुक्त मन, रोगरहित शरीर और समृद्धियुक्त जीवन तथा मृत्यु के बाद मोक्षसुख न मिले तब तक निरंतर अच्छे अवतार चाहिए तो हो सके तब तक दुर्गुणमुक्त तथा परोपकारमय जीवन जीने का खास प्रयत्न करना चाहिए और इसके लिये निम्नलिखित बातों को हमेशा ध्यान में रखे....

(1) दूसरों के साथ हमारा व्यवहार दर्पण के एक प्रतिबिम्ब जैसा होता है । जैसे दर्पण के सामने खड़े होकर हम जैसा बर्ताव करते है, वैसा ही प्रतिबिम्ब हमें देखने को मिलता है, वैसे ही दूसरों के साथ हम जैसा व्यवहार करेंगे, वैसा ही व्यवहार वे भी हमारे साथ करेंगे, इसलिए वास्तव में अगर सुखी होना चाहते हो तो अपना बर्ताव वैसा ही रखो जैसा आप खुद के लिए दूसरों से चाहते हो । अन्य जीवों के प्रति अपने मन में रहा हुआ द्वेषभाव कम करने के लिये भी हमें जो पसंद न हो वैसा व्यवहार जीवमात्र के साथ नहीं करना चाहिये ।

त्रिकालज्ञानी भगवान महावीर के अनुसार मात्र मानव या पशु-पक्षी ही नहीं, पर पृथ्वी-जल-अग्नि-वायु-वनस्पति तथा चलते-फिरते सूक्ष्म जीव-जंतु आदि में भी जीव तत्त्व है । इनमें भी हमारे जैसी ही आत्मा है । हमें जैसे दुःख पसंद नहीं है, वैसे इन्हें भी दुःख पसंद नहीं है, अतः इनकी भी हो सके उतनी रक्षा करें क्योंकि हमें अगर हमारे जन्म-मरण बंद करने हो तो सबसे पहले दूसरों को मरण देना सदा के लिये बंद करना ही पड़ेगा ।

(2) जो हमें दुर्गुणों से मुक्त बनने की प्रेरणा करते हों तथा पाँच इंद्रियों की गुलामी से छुडवाए वे ही वास्तव में 'गुरु' कहलाने योग्य है । ऐसे गुरु भगवंतों के प्रवचन अवश्य सुनें, उनका सत्संग करें और जीवन के महत्त्वपूर्ण कार्यों में उनका मार्गदर्शन अवश्य लें । क्योंकि जहाँ क्षणिक सुख है, ऐसे संसार में भी मार्गदर्शक बिना किसी भी क्षेत्र में सिद्धि नहीं मिलती, तो जहाँ शाश्वत सुख है ऐसा स्थान... अर्थात् इस दुःखमय संसार से मुक्ति तथा वर्तमान की समस्याओं का समाधान क्या हमें सद्गुरु की शरण बिना मिल सकेगा ? क्या आपके सिर पर कोई सद्गुरु है ?

(3) हमारे अंदर जो भरा हुआ है, वो जिसमें न हो वो ही 'भगवान' कहलाने योग्य है । हम क्रोध-माया-कपट-लोभ आदि अनंत दुर्गुणों से तथा स्त्री-पुत्र-परिवार धन-आदि सांसारिक मोह-माया से भरे हुए हैं तो जो ऐसे समस्त दुर्गुणों से एवं इस संसार की मोह-माया से मुक्त होकर 'भगवान' बन चुके हैं तथा इस संसार में वापस कभी अवतार नहीं लेने वाले हैं ऐसे शुद्धात्माओं के दर्शन-वंदन-पूजन मंदिर में जाकर अवश्य करें, क्योंकि जो खुद दोषमुक्त-मोहमुक्त तथा जन्म-मरणमुक्त बन चुके हों वो ही हमें भी दोषमुक्त-मोहमुक्त तथा जन्म-मरणमुक्त बना सकेंगे । हमें जैसा बनना हो उसको हम निरंतर हमारी नजर के समक्ष रखते हैं । हमें अगर समस्त दोषमुक्त-मोहमुक्त तथा जन्म-मरणमुक्त बनना हो तो जो ऐसे बन गए हैं, उनका आलंबन हमें लेना ही पड़ेगा ।

जल-अग्नि-वनस्पति आदि अविकसित जीवों की हिंसा का बहाना बनाकर ऐसे शुद्धात्माओं के वंदन-पूजन से दूर न रहे क्योंकि जो प्रवृत्ति हमारे अंदर क्रूरता-निष्ठुरता-निर्दयता आदि दुर्गुणों को बढ़ाए तथा जिसके फलस्वरूप भविष्य के प्रत्येक जन्म में हमे भयंकर दुःख सहन करना

पड़े ऐसी प्रवृत्तिओं को ही शास्त्र में 'हिंसा' कहा गया है । जबकि ऐसे वीतरागी व्यक्तिओं का पूजन तो आत्मा में स्थित समस्त दोषों का नाश करने में अत्यंत सहायक है । परमात्मा की पूजा के द्वारा आत्मा में जो शुभ भाव प्रगट होते है उससे करोडों जन्मों के पाप एक साथ धुल जाते है तथा १-२ जन्म में ऐसा स्थान मिल जाता है जहाँ पर जाने के बाद हमें कभी किसी की हिंसा करनी ही ना पडे । ''मूर्तिपूजा पाप है'' ऐसा वाक्य प्राचीन शास्त्रों में कहीं भी देखने नहीं मिलेगा । बाकी श्वास लेने में भी वायु की हिंसा तो होती ही रहती है इस दृष्टि से देखा जाए तो एक भी धर्म अनुष्ठान संपूर्ण अहिंसक नहीं मिलेगा । हिंसा बिना तो हम जी ही नहीं सकते पर जिस कार्य से हमारे भावों की विशुद्धि होती हो एवं जिसके फलस्वरूप हमारी तथा हमारे द्वारा अन्य जीवों की अनंतकालीन हिंसा हमेशा के लिये रुक जाए ऐसा मोक्ष प्राप्त होता हो वह कार्य हिंसक दिखते हुए भी वास्तव में अहिंसक ही कहलाता है । कत्ल के समय बचने के लिए चीखते हुए पशुओं की हिंसा क्रूरता के बिना नहीं हो सकती तथा जो क्रूर है उसे कभी मानसिक शांति प्राप्त नहीं होती और जिसके हृदय में शांति नही उसके हृदय में धर्म कैसे टिक सकता है ?

(4) जो हमें दुर्गुणमुक्त बना सके ऐसे पुस्तकों को अवश्य पढ़ते रहना चाहिए क्योंकि लोहा जब तक अग्नि का संग करता है तब तक उस पर हथौड़े के प्रहार होते ही रहते हैं उसी तरह जीव जब तक दुर्गुणों का संग करता है तब तक उसे भी दु:खों के प्रहार सहन करने ही पड़ेंगे । सुख सद्गुणों से तथा सद्गुण ज्ञान से बंधे हुए है इसलिए ज्ञान प्राप्त करने हेतु ज्ञानियों के संपर्क में रहे ।

(5) हिंसा-झूठ-चोरी अनीति-संग्रहवृत्ति-व्यसन-दारू-मांसभक्षण-जुआ-परस्त्रीगमन आदि दुर्गुणयुक्त जीवनशैली का त्याग कर Simple

Living & High Thinking वाली सात्त्विक एवं पवित्र जीवनशैली अपनाएं । तन-मन को भ्रष्ट करने वाले रात्रिभोजन-प्याज-आलू-गाजर-लहसुन-शक्करकंद-बीट आदि कंदमूल एवं अत्यंत तीखा-अति खट्टा आदि तामसी भोजन का त्याग करें, क्योंकि इससे मन में अशुभ विचार उत्पन्न होते हैं और जिसके फलस्वरूप व्यक्ति अशुभ कार्य में प्रवृत्त होता है तथा यहाँ पर हम जैसी प्रवृत्ति करते हैं, वैसी प्रवृत्ति वाले अवतार ही बारंबार हमें मिलते रहते हैं, जैसे कि जीवनभर संग्रह करने में ही लगे रहे तो चींटी का ही अवतार मिलेगा ।

(6) 'जो-जो काम करने से हमारे अंदर दुर्गुणों का नाश और सद्गुणों का विकास होता हो उन तमाम कार्यों को ही वास्तव में 'धर्म' कहा जाता है', इसलिये धर्म के नाम पर कोई भी कार्य करने के पूर्व जाँच लें कि मैं जो करने जा रहा हूँ क्या वह 'धर्म' कहलाने योग्य है ? क्योंकि जहर पीना या न पीना वो हमारे हाथ में है, पर पीने के बाद उसका परिणाम हमारे हाथ में नहीं । वैसे दुर्गुणों के वश होना या न होना वो हमारे हाथ में है, पर वश होने के बाद उसका परिणाम जो अनंत जन्म-मरण रूप में आ सकता है उसे रोकना हमारे हाथ में नहीं और गुण या दोष का हमेशा गुणाकार होता हैं । वर्तमान जीवन में हम जिसे ज्यादा महत्त्व देंगे भावी जन्मों में वो ही गुणाकार में हमारे अंदर प्रकट हो जाएँगे और तदनुसार सुख या दुःख की परंपरा चलती ही रहेगी । धर्म का वास्तविक मर्म क्या है ? उसे सद्गुरु के पास जाकर विस्तारपूर्वक अवश्य समझे ।

(7) वर्तमान में नित-नए रोग फूट-फूट कर बाहर आ रहे हैं और उसके कारण रोज हजारों लोग समय से पहले ही मरते जा रहे हैं । इन रोगों का एक मुख्य कारण ब्रह्मचर्य का नाश भी है । कलिकाल सर्वज्ञ जैनाचार्य

विजय हेमचंद्रसूरि विरचित 'योगशास्त्र' नाम के ग्रन्थ में एक श्लोक आता है कि...

कम्पः स्वेदः श्रमोमूर्च्छा भ्रमिर्ग्लानिर्बलक्षयः।
राजयक्ष्मादिरोगाश्च, भवेयुर्मैथुनोत्थिताः ।।७८।।

अर्थ : जो व्यक्ति खुद के ब्रह्मचर्य का नाश करता है उसका शरीर काँपता है, पसीना बहुत आता है, थोडे काम से भी वह थक जाता है, बेहोशी आती है, चक्कर आते हैं, शरीर टूटता है, बल का नाश होता है तथा उसे क्षय रोग यानी TB तथा एड्स जैसे बड़े-बड़े रोग उत्पन्न होने की पूरी-पूरी सम्भावना रहती है। वर्तमान के सेक्सोलोजिस्ट कभी ये हकीकत नहीं बताएँगे क्योंकि लोग अगर ब्रह्मचर्य पालने लगे तो वे सब भूखे मरेंगे इसलिए वे तो यही कहेंगे कि रात-दिन मजे करो और रोगी बनकर हमारी जेब भरो। वर्तमान में मात्र भारत के अंदर ही करोडों लोग ऐसे है जो असाध्य बीमारी के शिकार है।

इन समस्त व्याधिओं से बचने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन खास करें। अपनी शक्ति का एक बिंदु भी व्यर्थ न गँवाए। इससे तीव्र संकल्प शक्ति, आंतरिक पवित्रता, मानसिक एकाग्रता एवं तीव्र स्मरणशक्ति की प्राप्ति होती है और इसके लिये जिन-जिन कार्यों से मन में विकार उत्पन्न होते हो उन समस्त कार्यों से सर्वथा दूर ही रहे। ब्रह्मचर्य पालन द्वारा अपार शक्तिओं का स्वामी अवश्य बनना चाहिये।

(8) हमारी आत्मा में रहे हुए मानवता नाम के गुण को जीवंत रखने हेतु तन-मन-धन से दूसरों को सहायक बनने सदैव प्रयत्नशील रहें क्योंकि जिसमें मानवता ही न हो उसके बाकी सभी धर्म भी कितने फलदायक बनेंगे

यह बहुत बड़ा सवाल है । जो दूसरों को मददगार बनता है उसे कभी बेरोजगार बनना नहीं पड़ता । अपने जीवन को सफल बनाने हेतु मानवता के कार्य अवश्य करने चाहिये ।

(9) जो समस्त दुर्गुणमुक्त बन गए हैं अथवा दुर्गुणमुक्त बनने हेतु प्रयत्नशील हैं ऐसे समस्त जीवात्माओं को जिसमें नमस्कार किया गया है ऐसे नवकार मंत्र का बार-बार स्मरण अवश्य करें । हजारों देवताओं से अधिष्ठित इस नवकार मंत्र के प्रभाव से बहुत सारी आफतें आने के पहले ही भाग जाती है, आवश्यकताएँ पूर्ण होती है तथा मन में अत्यंत शांति की प्राप्ति होती है । नवकार मंत्र के चमत्कारों का अनुभव करने हेतु सद्गुरु के पास जाकर इस मंत्र को विधिपूर्वक ग्रहण करे एवं इसका नित्य जाप करें ।

(10) पाँच इन्द्रियों को पसंद आए ऐसी सामग्री, यश-कीर्ति-समृद्धि की कामना और शरीर की सुखशीलता ये सभी बातें मोक्षसुख तथा वर्तमान के भौतिक सुख प्राप्त कराने में प्रबल प्रतिबंधक है इसलिये इन सब से सदैव दूर ही रहे ।

जैसे अस्थिर जल को स्थिर करना हो तो वह जिस बर्तन में रहा हुआ है उस बर्तन को ही सबसे पहले स्थिर करना पड़ता है वैसे जीवन को अगर सद्गुणमय बनाना हो तो उपर बताए गए तथा इनके सिवाय भी दुर्गुणनाशक तथा सद्गुणवर्धक अन्य जितने भी उपाय हो उन सभी उपायों को हमें रोग में चिकित्सा की तरह अनिच्छापूर्वक भी आत्मसात् करने ही पड़ेंगे ।

ऐसा श्रेष्ठ सद्गुणमय एवं पवित्र जीवन जीने से जीव को यहाँ पर अत्यंत शांति मिलती है । आने वाले जन्मों में समृद्धि युक्त अच्छे अवतार मिलते हैं और कुछ ही जन्म में जन्म-मरण

के चक्र में से मुक्त बनकर आत्मा को अनंत-अक्षय-सर्वोत्कृष्ट तथा संपूर्ण ऐसा मोक्षसुख प्राप्त होता है और जीव खुद 'भगवान' बन जाता है ।

धर्म का शुद्ध स्वरूप जानने हेतु तथा आत्मा को दुर्गुणमुक्त बनाकर शांति-समाधि-समृद्धि-सद्गति और मोक्षसुख कैसे प्राप्त करें ? इस विषय में आप अगर विशेष जानना चाहते हैं तो हमसे मिलने आ सकते हैं और आपके ग्रुप के लिये इस विषय में सेमिनार रखने की आपकी इच्छा हो तो हमारे E-mail ID पर अवश्य संपर्क करें । आपके प्रत्येक सवाल का संतोषप्रद जवाब दे सके ऐसे विशिष्ट व्यक्तिओं को आपके पास यहाँ से भेजा जाएगा । इस विषय के अन्य पुस्तकों को प्राप्त करने के लिये तथा इस विषय से संबंधित प्रश्नों को आप पत्र, फोन, वोट्सएप या ई-मेल द्वारा भी पूछवा सकते हैं ।

साथ में जिन्होने इस प्रकार के तत्त्वज्ञान का विशिष्ट अभ्यास किया हो और अपने शेष समय में देश-विदेश में जाकर सेमिनारों के द्वारा दूसरों को समझाने के लिये अपना समय दे सकते हों, वे भी हमसे अवश्य संपर्क करे । धनदान करने वाले से भी आध्यात्मिक ज्ञानदान करने वाला करोड़ों गुणा ज्यादा फल प्राप्त करता है क्योंकि धन के द्वारा व्यक्ति की वर्तमान समस्याओं का विसर्जन होता है पर आध्यात्मिक ज्ञान के द्वारा तो समस्याओं के मूल समान इस संसार का ही विसर्जन हो जाता है । तब 'ना रहेगा बाँस, ना बजेगी बाँसुरी' । इसलिये अगर संभव हो तो आप भी आध्यात्मिक ज्ञान को प्राप्त कर इसे योग्य जीवों तक अवश्य पहुँचाए तथा इस आध्यात्मिक ज्ञान को ग्रहण कर देश-विदेश में प्रचार-प्रसार करने के द्वारा आजीविका प्राप्त करने की एक नई लाईन सीखना चाहते हो तो भी हमसे अवश्य संपर्क करे ।

* यह पुस्तक आपको पसंद आयी ?

* यदि हाँ, तो इतना करेंगे ?

* इसे आपके मित्र-परिचित-स्वजनों को पढ़ाए ।

* ३६ कोम के सैकडों लोगों को जीवन की वास्तविक दिशा दिखाने वाली इस पुस्तक के लाभार्थी बनकर घर-घर में इसका वितरण अवश्य करवाएँ ।

* प्रति वर्ष १-२ महीने के वेकेशन के समय में अपने बच्चों को संस्कारी तथा आध्यात्मिक जीवन का स्वामी बनाने हेतु उन्हें सद्गुरु के संपर्क में अवश्य रखें क्योंकि जब तक वे आपकी सुनते हैं तब तक आपने उन्हें संस्कारी नहीं बनाया तो बड़े होने के बाद वे आपकी कभी नहीं सुनेंगे ।

* मोक्षसुख प्राप्त करने तथा वर्तमान जीवन में भी सुख-शांति-समृद्धि आदि को प्राप्त करने का वास्तविक रहस्य समझने हेतु अपने फ्री समय में सद्गुरु के पास जाकर विशिष्ट ज्ञानाभ्यास अवश्य करें...

सदा प्रसन्न रहने के सुवर्ण सूत्र

* मरने के बाद भगवान के पास लोग हमारे लिये शांति की प्रार्थना करे उससे हमें शांति मिलेगी यह जरूरी नहीं है पर जीते जी अगर हमने लोगों को शांति दी होंगी तो मरते दम तक हमें अवश्य शांति मिलेगी । हम दूसरों को जैसा देते है, वैसा ही हमें वापस मिलता है । हर पल प्रसन्न रहना चाहते हो तो दूसरों को प्रसन्न रखो । वे आपसे नाराज़ रहे ऐसा काम ही मत करों ।

* इस संसार में मेहमान की तरह जीना सीखो, मालिक बनकर नहीं । जब हमारा खुद का शरीर भी हमारे कंट्रोल में नहीं है तो दूसरे हमारे कंट्रोल में रहेंगे ऐसी अपेक्षा ही क्यों रखनी ?

* किसी दिन एक मटका और गुलदस्ता साथ में खरीदा हो और घर में लाते ही 50 रु. का मटका अगर फूट जाए तो हमें दुःख होता है क्योंकि मटका इतना जल्दी फूट जाएँगा ऐसी हमें कल्पना भी

नहीं थी पर गुलदस्ते के फूल जो 200 रु. के है वे शाम तक मुरझा जाए तो भी हम दु:खी नहीं होते क्योंकि ऐसा होने वाला ही है यह हमें पता था । मटके के पास इतना जल्दी न फूटने की अपेक्षा थी तो फूटने पर दु:ख का कारण बना पर फूलों से अपेक्षा नहीं थी इसलिये वे दु:ख का कारण नहीं बने । इसका मतलब यह हुआ कि जिसके लिये जितनी अपेक्षा ज्यादा, उसकी तरफ से उतना दु:ख ज्यादा । जितनी अपेक्षा कम, उतना दु:ख कम ।

* आपको जो मिला है वो इस दुनिया के 90% लोगों को नहीं मिला । तो जिस विद्यार्थी का नाम top ten में आता हो उसे दु:खी होना चाहिये या आनंद मनाना चाहिये ?

* जब आपसे कोई बात पूछे तो उसका जवाब इस प्रकार दो कि सुनने वाला सदा के लिये आपका हो जाए । सुंदर स्वभाव एवं मीठी वाणी सबसे श्रेष्ठ वशीकरण विद्या है ।

* परिस्थिति को बदलने की शक्ति सभी के पास नहीं होती पर मन:स्थिति को बदलने की शक्ति तो सभी के पास है ही ।

* जो पसंद है उसे पाने का निरर्थक प्रयास करने के बदले जो मिला है उसे पसंद कर लो तो प्रसन्नता हाथ में ही है ।

* जैसे तंदुरुस्ती के लिये भोजन के साथ मलशुद्धि भी जरूरी है, वैसे प्रसन्नता के लिये तीव्र यादशक्ति के साथ तुरंत भूलने की शक्ति भी जरूरी है । सुखद प्रसंगों को याद रखें और दु:खद प्रसंगों को भूल जाएँ ।

* फोटो खींचाते समय रखा हुआ हँसता चेहरा हमारी तकलीफों को

दूर करेगा ही यह जरुरी नहीं पर तकलीफ के समय में रखा हुआ हँसता चेहरा हमारी तकलीफों को अवश्य कम कर सकता है ।

* खुद के लिये दूसरों का उपयोग कम से कम करो और दूसरों के लिये खुद का उपयोग अधिक से अधिक करो, फिर देखों प्रसन्नता मिलती है या नहीं ?

* Time is more precious than money. अपनी 1-1 क्षण का सदुपयोग करने वाले को कभी अप्रसन्न रहने का अवसर नहीं आता ।

* जिसका परिणाम सुंदर नहीं है ऐसे कार्यों में मिली हुई प्रसन्नता के बदले जिसका परिणाम सुंदर है ऐसे कार्यों में मिली हुई अप्रसन्नता बेहतर है क्योंकि ऐसी अप्रसन्नता के बाद प्रसन्नता के भंडार खुल जाते हैं ।

* मानसिक प्रसन्नता से भी आत्मिक प्रसन्नता ज्यादा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि खुद की आत्मा को अगर हम प्रसन्न न कर पाए तो भावि अनंतकाल तक मानसिक प्रसन्नता भी दुर्लभ बन जाएँगी ।